जाति उन्मूलन

मार्क्सवादी बनाम आंबेडकरवादी परियोजना

एच.एल. दुसाध

आज के भारत की ज्वलंत समस्यायें—15

जाति उन्मूलन

मार्क्सवादी बनाम अम्बेडकरवादी परियोजना

एच.एल. दुसाध

डाइवर्सिटी फॉर इक्वालिटी ट्रस्ट
लखनऊ

प्रथम संस्करण : 2013
द्वितीय संस्करण : 2016
तृतीय संस्करण : 2019
चतुर्थ संस्करण : 2024

प्रकाशक : **डाइवर्सिटी फॉर इक्वालिटी ट्रस्ट**
डाइवर्सिटी हाउस, 2/1467
आदिल नगर, कल्याणपुर, लखनऊ-226022
E-mail : hl.dusadh@gmail.com
मो. : 9654816191

© **डाइवर्सिटी ट्रस्ट**

मूल्य : 700.00 रुपये

रचना	:	**जाति उन्मूलन : मार्क्सवादी बनाम आंबेडकरवादी परियोजना**
लेखक	:	एच.एल. दुसाध
आवरण	:	शशिकान्त
शब्दांकन	:	कम्प्यूटेक सिस्टम, शाहदरा, दिल्ली-32
मुद्रक	:	क्विक ऑफसेट, दिल्ली-94

समर्पण

स्वाधीनोत्तर भारत के विरल बहुजन

मुक्ति योद्धा

पलाश विश्वास *को*

जो तमाम प्रतिकूलताओं के मध्य

आज भी क्षिप्र गति से कलम

को तलवार की तरह इस्तेमाल

किये जा रहे हैं

अनुक्रम

अध्याय-1

गैर-मार्क्सवादियों से संवाद

मार्क्सवादियों को योग्य जवाब देने के लिए हमारी अपील—एच. एल. दुसाध 37

गैर-मार्क्सवादियों से संवाद

सर्वस्वहाराओं के मसीहा : डॉ. आंबेडकर—एच. एल. दुसाध 42
खौफ आंबेडकरवाद का—एच. एल. दुसाध 47
ब्राह्मणों की गिरफ्त में मार्क्सवाद 50
आदिवासियों का पुनर्वास—एच. एल. दुसाध 52
समग्र वर्ग की चेतना से कंगाल हिन्दू—एच.एल. दुसाध 56
क्या प्रतिक्रियावादी तबके के हाथ में है मार्क्सवादी आन्दोलन! 59
वेदविश्वासियों के शिकंजे में आदिवासी—एच. एल. दुसाध 63
सर्वस्व-हाराओं के देश में सर्व-हारा के मुक्तिदाता का जयगान
—एच. एल. दुसाध 69
मार्क्सवादियों द्वारा हिंदू साम्राज्यवाद की अनदेखी—एच. एल. दुसाध 76
मुझे कम्युनिस्ट पार्टी से नफरत है : जगदेव प्रसाद—एच. एल. दुसाध 80
आंबेडकरवादियों के निशाने पर मार्क्सवादी ब्राह्मण क्यों—एच. एल. दुसाध 90
भारत का इतिहास : आरक्षण पर केंद्रित संघर्ष का इतिहास 95
—एच. एल. दुसाध 95
वर्णवादी आरक्षण का सर्वव्यापी दायरा—एच. एल. दुसाध 100
हिंदू साम्राज्यवाद को अटूट रखने की परिकल्पना—एच. एल. दुसाध 103
आरक्षण पर संघर्ष के चलते शुंग भारत में तब्दील—बौद्ध भारत 108
इस्लामिक साम्राज्यवाद का कारण : हिन्दू आरक्षण—एच. एल. दुसाध 111
ब्रितानी साम्राज्यवाद के पीछे भी : हिन्दू आरक्षण—एच. एल. दुसाध 114
डॉ. आंबेडकर : भारतीय इतिहास के सर्वश्रेष्ठ नायक—एच. एल. दुसाध 119
स्वाधीनोत्तर भारत का इतिहास : विशुद्ध आरक्षण पर संघर्ष का इतिहास
—एच. एल. दुसाध 122
आंबेडकरी आरक्षण के खात्मे के लिए नव साम्राज्यवाद का स्वागत
—एच. एल. दुसाध 128
इतिहास के गर्भ से निकला डाइवर्सिटी का मुद्दा—एच. एल. दुसाध 132

अध्याय-2

साक्षात्कार

साक्षात्कार की प्रश्नावली 147

प्रश्नोत्तर

डॉ. विजय कुमार त्रिशरण 147
मूलचन्द सोनकर 190
मनोज कुमार 206
शीलबोधी 215
बुद्ध शरण हंस 220
अजय यतीश 244
जवाहर लाल कौल 'व्यग्र' 246
मुसाफिर बैठा 250
माता प्रसाद 261

लेखकीय

परिवर्तनकामी साथियों,

जाति उन्मूलन असंभव

'जाति-उन्मूलन : मार्क्सवादी बनाम आंबेडकरवादी परियोजना'बहुजन डाइवर्सिटी मिशन द्वारा दुसाध प्रकाशन के सौजन्य से प्रकाशित की जा रही 'आज के भारत की ज्वलंत समस्याएं' श्रृंखला की 15वीं पुस्तक है। ज्वलंत समस्याएं सीरिज की पुस्तकों में इसका 15वें पायदान होना बताता है कि डाइवर्सिटी मिशन की प्राथमिकता में इसका स्थान क्या है। बहरहाल जिस समस्या पर यह पुस्तक केन्द्रित है उसके कारण और निवारण पर विस्तृत चर्चा करने के पूर्व जाति समस्या पर सर्वाधिक चिंतन करनेवाले डॉ. आंबेडकर की कुछ बातों पर गौर कर लिया जाय जो उन्होंने समाजशास्त्रीय अध्ययन की दुनिया में मील का पत्थर बनी अपनी रचना 'जाति का विनाश' में कही है।' जातिवाद ईंट-गारे की कोई दीवार या कांटेदार तारों की घेराबंदी नहीं है जो लोग को आपस में मिलने से रोकती हो और जिसको गिरा देने से बाधा दूर हो जाएगी। यह तो एक धारणा अर्थात मानसिक स्थिति है। अतः जातिवाद की समाप्ति का अभिप्राय किसी भौतिक पदार्थ का अस्तित्व मिटाना नहीं,वरन धारणा अर्थात भावनात्मक परिवर्तन से है।'शायद बाबा साहेब आंबेडकर की इस बात को दृष्टिगत रखते हुए ही पिछले दिनों एक लेखक ने लिखा था, जाति कोई शिव का धनुष नहीं जो कोई राम आयेगा और उसे एक बार में तोड़ डालेगा।'

उपरोक्त उद्धरण का आशय यह है कि जाति एक अमूर्त समस्या और एक मानसिक व्याधि है जिसका खात्मा लगभग असंभव है। किन्तु हताश होने की जरुरत भी नहीं क्योंकि असंभव होने के बावजूद जाति का खात्मा किया जा सकता है यदि हम उन कारकों को ध्वस्त कर दें जो इस मानसिक व्याधि के उत्स हैं। इसके लिए सबसे पहले यह जानना जरुरी है कि वह कौन से तत्व हैं जो जाति के रोग की जड़ में हैं। इसकी सबसे सटीक पहचान खुद डॉ. आंबेडकर ने ही 'जाति का विनाश' में कराया है। उन्होंने लिखा है-'जातिवाद को बुरा कहा जाता है। कुछ लोग यहाँ तक कहने को तैयार हैं कि जातिवाद ऐसे जहर को जन्म देता है,जो मानवता के लिए घातक है। परंतु यह भी नहीं कहा जा सकता कि हिन्दू जातिवाद इसलिए मानते हैं क्योंकि वे मानवता के शत्रु हैं अथवा उनका दिमाग खराब है। वे इसलिए मानते हैं क्योंकि धर्म उन्हें प्राणों से भी प्यारा है। इसलिए जातिवाद मानने के लिए हिन्दू नहीं, उनका धर्म दोषी है जिसने जातिवाद के जहर को जन्म दिया है। यदि यह बात सही है तो आपको जातिवाद के अनुयायियों से न उलझ कर हिन्दू धर्म दृशास्त्रें

का विरोध करना करना चाहिए क्योंकि यही उसे जातीयतावादी धर्म की शिक्षा देते हैं। जाति समस्या के पीछे धर्मशास्त्रें की क्रियाशीलता को देखते हुए ही डॉ. आंबेडकर ने हिदू धर्म-शास्त्रों को डायनामाइट से उड़ाने का निर्देश दिया था। अब यदि हिन्दुओं के सभी धर्म-ग्रंथों को डायनामाइट से उड़ाना संभव है तब तो उसके साथ जाति के ध्वंस की भी सम्भावना से इन्कार नहीं किया जा सकता। लेकिन हम जानते हैं कि समस्त धर्म शास्त्रों को डायनामाइट से उड़ाना असम्भव है इसलिए जाति और जातिवाद के खात्मे को भी असंभव करार देने में द्विधा नहीं करनी चाहिए। क्या जाति का विनाश मुमकिन है? इस सवाल के जवाब में डॉ. आंबेडकर ने कहा है-'जहाँ तक मेरा प्रश्न है मैं इसे लगभग असंभव ही समझता हूँ।' बाबा साहेब ने जाति उन्मूलन को क्यों लगभग असंभव घोषित किया, इसके लिए जाति उन्मूलन पर उनकी रचना का एकाधिक बार अध्ययन जरुरी है।

कांशीराम के कारण बौद्धिक विमर्श के केंद्र में आई जाति

बहरहाल जिस जाति का उन्मूलन असंभव है उसे संभव मानते हुए मध्य युग के कई संतों एवं भारतीय पुनर्जागरण के तमाम महानायकों व उनके अनुसरणकारियों ने ही कमोबेश इसके खात्मे में अपनी उर्जा खर्च किया। यह सिर्फ कांशीराम थे जिन्होंने जाति के खात्मे में अपनी उर्जा न व्यय कर 'जाति के इस्तेमाल' की रणनीति पर काम करने का मन बनाया। कार्ल मार्क्स ने कहा है गुलामों को गुलामी का एहसास करा दो ,वे गुलामी की बेड़ियाँ तोड़ डालेंगे। कांशीराम ने जाति चेतना को हथियार बनाकर जाति के देश भारत के गुलामों को गुलामी का अहसास कराने का जो उद्योग लिया, उससे हजारों साल के इतिहास में एक विराट परिवर्तन का आगाज हुआ। जाति के इस्तेमाल के फलस्वरूप जाति के असंख्य टुकड़ों में बंटे कलहरत लोग भ्रातृ-भाव लिए एक दूसरे के निकट आये जिससे भारत भूमि पर पहली बार वर्ग-अल्पजन व बहुजन समाज- बनने की प्रक्रिया शुरू हुई। जाति चेतना के राजनीतिकरण के फलस्वरूप जहाँ हजारों साल की दास जातियों में शासक बनने की महत्वाकांक्षा पैदा हुई वहीं, परम्परागत शासक जमात राजनीतिक रूप से एक लाचार समूह में तब्दील हुई। यही नहीं आज उनके भागीदारी दर्शन- जिसकी जितनी संख्या भारी,उसकी उतनी भागीदारी-से प्रेरित होकर वर्ण-व्यवस्था के वंचित राज-सत्ता ही नहीं,अर्थ और धर्म-सत्ता में भी संख्यानुपात में हिस्सेदारी के लिए आगे बढ़ रहे हैं। उनके प्रयासों से ही बीसवीं सदी के शेष डेढ़-दो दशकों में जाति बौद्धिक विमर्श का केंद्र बनी और दुनिया भर के समाज विज्ञानियों ने इसके विषय में अध्ययन करने में एक दूसरे से होड़ लगाना शुरू किया। यह कांशीराम के जाति चेतना के प्रसार का कमाल था कि जिस जाति के प्रति मार्क्सवादियों में पार्टी के जन्मकाल से ही हिकारत का भाव क्रियाशील रहा,

वे भी अपने एजेंडे में,अनिच्छापूर्वक ही सही इसे जगह देने लगे। बात यहीं तक नहीं थमी वे जाति उन्मूलन पर पत्र-पत्रिकाए प्रकाशित तथा सभा-संगोष्ठियाँ भी आयोजित करने लगे।

मार्क्सवादियों के बौद्धिक दुःसाहस पर हमारी अपील

गत 15 मार्च,2013 को जब हम सब लखनऊ के डॉ. आंबेडकर महासभा में 'बहुजन डाइवर्सिटी मिशन' का सातवां स्थापना दिवस मनाने में व्यस्त थे ,उन्ही दिनों नरम-गरम कई टुकड़ों में बंटे मार्क्सवादियों के एक ग्रुप ने 12-16 मार्च,2013 तक चंडीगढ़ के भकना भवन में जाति-उन्मूलन पर एक संगोष्ठी आयोजित किया। उसकी विस्तृत रिपोर्ट सुप्रसिद्ध दलित पत्रकार पलाश विश्वास ने कईयों के साथ मुझे भी मेल किया। उस में जाति उन्मूलन की परियोजना पेश करने के क्रम में बहुजन-मुक्ति के वैचारिक आधार को ध्वस्त करने का चरम बौद्धिक दुसाहस किया गया था जिसका साक्ष्य 'मार्क्सवादियों को योग्य जवाब देने के लिए हमारी अपील'में देखा जा सकता है। मैंने वह अपील इसलिए जारी की थी ताकि बहुजन बुद्धिजीवियों की ओर से मार्क्सवादियों को योग्य जवाब मिल सके। 20 मार्च को जारी उस अपील के सप्ताह भर बाद 27 मार्च को उस पलाश विश्वास का एक और लेख छपा जो जाति और आंबेडकर पर मार्क्सवादियों से लगातार संवाद चला रहे थे। उनके कुतर्कों से आजिज आकर उन्होंने 27 मार्च को 'अब आंबेडकर विरोधियों, बहुजनो को खंडित करनेवालों से कोई संवाद नहीं' शीर्षक से लेख लिखकर संवाद का क्रम बंद करने की घोषणा कर दिया। उनके ब्लॉग पर वह लेख प्रकाशित होते ही एक मार्क्सवादी ने प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए लिखा कि जब लोग तर्कों में हार जाते हैं तो पलाश विश्वास की तरह पलायन करते जा हैं। चंडीगढ़ की संगोष्ठी में जिस तरह गौतम बुद्ध और खासकर बाबा साहेब डॉ. आंबेडकर को खारिज करने का दुरूसाहस किया गया था उससे मैं उनको योग्य जवाब देने की मानसिक प्रस्तुति लेने लगा था। किन्तु जिस तरह पलाश विश्वास द्वारा उठाई गयी आपत्ति को हलके में लिया गया उससे मेरे धैर्य का बांध टूट गया और मैंने उसी दिन से उनसे संवाद बनाने का सिलसिला शुरू किया। 29 मार्च को एक मार्क्सवादी ने मेरे पहले ही लेख का यह कहकर जवाब देने से इन्कार कर दिया कि किताबें बेचना मेरा धंधा है इसलिए एक और किताब की सामग्री इक्कठा करने के लिए ही यह प्रयास कर रहा हूँ। उस मार्क्सवादी की ऐसी टिपण्णी से आहत होकर मैंने अगले दिन से गैर-मार्क्सवादियों से संवाद की श्रृंखला शुरू की और थोड़े से अंतराल में 21 लेख लिख डाले।

वैसे तो चंडीगढ़ संगोष्ठी से लगभग एक दर्जन जो बातें निकल कर आयीं,जिनका उल्लेख पृष्ठ... पर है, वही किसी भी आंबेडकरवादी को उनका योग्य जवाब देने

के लिए बाध्य कर सकती थीं। किन्तु नहीं,उस संगोष्ठी के आधार-पत्र में कुछ और भी ऐसी बातें थीं जिनसे अवगत होने के बाद कोई भी आंबेडकरवादी खामोश नहीं रह सकता। सबसे पहले डॉ. आंबेडकर।

आंबेडकर : अलगाववादी-अवसरवादी तथा उनका चिंतन अमौलिक और अगंभीर

उनके आधार-पत्र में अतीत के मार्क्सवादियों द्वारा डॉ. आंबेडकर को अलगाववादी, अवसरवादी और ब्रिटिश समर्थक बताएं जाने को सही ठहराते हुए आगे कहा गया था कि इतिहास दर्शन,राजनीति और अर्थशास्त्र, इन सभी क्षेत्रें में आंबेडकर का चिंतन अमौलिक था, अगंभीर था, अंतर्विरोधों से भरा था और बहुधा गलत था। वे मूलतः और मुख्यतः एक बुर्जुआ समाज सुधारक थे। एक प्रतिबद्ध संविधानवादी थे, इतिहास निर्माण की कारक शक्ति वे जनता को नहीं,बल्कि महापुरुषों और बुद्धजीवियों को मानते थे तथा इतिहास- विकास के सुनिश्चित विज्ञान की खोज में उनकी कोई दिलचस्पी नहीं थी। वे अपने समय से 150 वर्ष पहले पैदा हुए पुनःस्थापना काल के इतिहासकारों-त्येरी,मिन्ये,गीजो और तियेर ही नहीं,प्रबोधनकाल के दिदेरो,वाल्टेयर,रूसो आदि से भी मीलों पीछे थे। यूँ कहें कि उनकी इतिहास दृष्टि भौंडे भाववाद और अटकलबाजी से अधिक कुछ नहीं थी। बौद्ध धर्म के अंगीकरण पर आधार पत्र कहता है कि धर्मान्तरण को उन्होंने दलित मुक्ति के उपाय के रूप में देखा और अंतिम दिनों में बौद्ध बन गए। हालाँकि बहुत कम दलितों ने उनकी बात मानी। यह आंबेडकर के चरित्र का विचित्र अंतर्विरोध था कि एक ओर तो वे पश्चिमी देशों की जनवादी व्यवस्था और संविधानवाद के कट्टर समर्थक ,एडमंड बर्क के प्रशंसक और जॉन डेवी के अनुयायी थे ,दूसरी ओर अन्ततोगत्वा सबसे अहम् समस्या का समाधान उन्हें 2,000 साल पुराने ,प्राचीन गणपदीय गणराज्यों के काल के एक धर्म में दिखाई दिया। निश्चय ही दलित आबादी में जाग्रति पैदा करने,कांग्रेसी नेतृत्व का एक हद तक पर्दाफाश करने और तत्कालीन समय में आरक्षण जैसी बुर्जुआ जनवादी अधिकार हासिल करने में उनकी सकारात्मक भूमिका रही।'

आरक्षण नहीं,दलितों का मुख्य मुद्दा हो समान शिक्षा,सबको रोजगार : मार्क्सवादी

दलितों के विषय में आधार-पत्र कहता है कि सर्वहारा और अर्द्धध-सर्वहारा वर्गों का बहुतायत दलित जातियों से नहीं आता। आज गाँव में जो कुलक हैं वे ज्यादातर मध्य जातियों से आते हैं और वे दलितों का उत्पीड़न करने में सवर्ण जातियों के भूतपूर्व सामंती जातियों से कही आगे हैं। पूंजीपति सभी जातियों में हैं(दलित नाम मात्र के हैं),पर नौकरशाही और बौद्धिक पेशों पर ,विशेषकर उच्च स्तरों पर आज

भी मुख्यतः सवर्णों का कब्जा है। आरक्षण के चलते इस दायरे में दलितों और कुछ मध्य जातियों की पहुँच बनी है,पर आबादी के अनुपात में उनका प्रतिशत बहुत कम है और निम्न से उच्च पदों की ओर वह प्रतिशत तेजी से घटता गया है। दलित जातियों को कुछ रियायतें ,सहूलियतें और सुरक्षा के लिए संवैधानिक-वैधिक प्रावधान एक बात है दलित-उत्पीड़न ,उनके सामाजिक पार्थक्य,अपमान तथा दोयम दर्जे की सामाजिक स्थिति का पूर्णतः खात्मा तथा जाति प्रथा का नाश सर्वथा अलग बात है। क्या आरक्षण जैसी रियायतों का रास्ता अंततः दलित- मुक्ति और जाति उन्मूलन की और जाता है?छः दशकों में दलितों को आरक्षण से कितना लाभ मिला है और इस रफ्तार से वे अपनी स्थिति से कब तक उबर पाएंगे?साठ वर्षो में आरक्षण ने दस प्रतिशत को उच्च मध्य वर्ग और उनमें से दो प्रतिशत को बुर्जुआ वर्ग बनाया है। आज तो आरक्षण एक गैर-मुद्दा (non-issue) है, दलित मुक्ति के एजेंडे पर इसे विस्थापित करके 'समान शिक्षा, सबको रोजगार' के मुद्दे को स्थान देना होगा।

1951 तक कम्युनिस्ट पार्टी के पास क्रान्ति का कोई कार्यक्रम नहीं

लम्बे समय तक मार्क्सवादियों द्वारा जाति की उपेक्षा किया जाने के प्रश्न पर दस्तावेज कहता है कि जिस पार्टी के पास 1951 तक भारतीय क्रान्ति का कोई कार्यक्रम तक न हो ,भूमि कार्यक्रम का कोई दस्तावेज तक न हो,उससे सिर्फ जाति प्रश्न पर सांगोपांग अवस्थिति दस्तावेज और सुस्पष्ट दिशा की अपेक्षा भला कैसे की जा सकती है?यानि जाति प्रश्न पर कम्युनिस्ट आन्दोलन में जो कमी थी ,वह उसकी भारतीय क्रान्ति के कार्यक्रम विषयक आम कमजोरी का हिस्सा मात्र थी। लम्बी भूमिका के बाद आधार पत्र जाति उन्मूलन की निम्न परियोजना प्रस्तुत करता है,

जाति उन्मूलन की समाजवादी परियोजना

भूमि-उद्योग-व्यापार का राजकीयकरण

सर्वहारा सत्ता सभी तरह के बुर्जुआ राजकीय फार्मों,पुरानी जागीरों की विशाल खेती की जमीन,शहरों के उद्योगपतियों-व्यापारियों-नौकरशाहों की भू-सम्पतियों ,बड़े फार्मरों के फार्मों और बागानों का (बिना मुआवजा दिए)राजकीयकरण कर देगी। राजकीय उद्योगों की तरह सभी उसमें काम करेंगे और प्रबंधन का काम सभी काम करनेवालों की चुनी हुई कमेटियां पार्टी के नेतृत्व में संभालेंगी । इस प्रक्रिया की अंतिम मंजिल सारी खेती का राष्ट्रीयकरण होगा। इस तरह दलितों की सहस्राब्दियों की भूमिहीनता समाप्त कर समाजवाद जाति-व्यवस्था के एक प्रमुख ग्रामीण अवलंब को नष्ट कर देगा। भूमि की भांति ही कल-कारखानों का राजकीयकरण कर दिया जायेगा जिसका प्रबंधन पार्टी के नेतृत्व में मजदूरों, तकनीशियनों की चुनी हुई कमेटियां

संभालेंगी। मशीनीकरण और ड्रेनेज-सीवरेज ट्रीटमेंट प्लांट्स की नियोजित राजकीय व्यवस्था अस्वच्छ कामों की श्रेणी स्वरूप बदल डालेगी।

शेयर बाजार बंद

शेयर बाजार तत्काल बंद हो जायेंगे। व्यापार-क्षेत्र पर राजकीयकरण होने से विनिमय पर जनता की सत्ता का नियंत्रण हो जायेगा इससे जमाखोरी-मुनाफाखोरी, दलाली तो समाप्त होगी ही खानदानी पेशों की रूढ़ व्यवस्था टूटने से जाति प्रथा पर प्रभाव पड़ेगा। आर्थिक भेदभाव के साथ शिक्षा संसथान भी जातिगत भेदभाव के भी अहम् केंद्र हैं। समाजवादी राज्य द्वारा तुरत किये जानेवाले कामों में से यह एक है कि सभी तरह के निजी शिक्षा संस्थानों का राजकीयकरण कर दिया जाता है,कोचिंग संस्थान प्रतिबंधित हो जाते हैं और नीचे से ऊपर तक सभी नागरिकों को निःशुल्क और समान शिक्षा समाजवादी राज्य की सर्वोपरि जिम्मेदारियों में से एक होगी। आर्थिक स्तर की मिटती असमानता के साथ जब शिक्षा, संस्कृति के क्षेत्र में भी अंतर मिट जायेगा तो जातिभेद की दीवार ढहने में और अधिक आसानी हो जाएगी। जहाँ तक स्वास्थ्य का मामला है प्राइवेट प्रैक्टिस ,निजी चिकित्सालय ,निजी मेडिकल कॉलेज पूर्णतः प्रतिबंधित होंगे। पूरी स्वास्थ्य सेवा राज्य के नियंत्रण में होगी। निःशुल्क मेडिकल शिक्षा और निःशुल्क समान स्वास्थ्य सेवा से भी दलित मेहनतकशों की सामजिक स्थिति में फर्क आएगा।

जाति उन्मूलन के लिए समाजवादी आवास नीति

जातिभेद को दूर करने में समाजवादी आवास-नीति की अहम भूमिका होगी। समाजवादी राज्य आवास निर्माण का पूरा काम अपने हाथ में ले लेगा। बिल्डर, ठेकेदार सामान्य कामकाजू नागरिक बन जायेंगे। सर्वहारा सत्ता का पहला काम होगा ,सभी बेघरों को और झुग्गी-झोपड़ीवासियों के लिए सुविधाजनक आवास मुहैया कराना। यह काम पुराने महलों,कई घरों के मालिकों के अतिरिक्त मकान जब्त करके,पांच सितारा होटलों ,बारातघरों जैसे इफरात विलासिता के अड्डों को आवासीय कॉम्प्लेक्स बनाकर और बड़े-बड़े घरों में रहने वालों के घरों का हिस्सा लेकर पूरा किया जायेगा । बेतरतीब बसे गांवों को हर बुनियादी सुविधा से युक्त कालोनियों में ढालकर बहुत सारी फाजिल जमीन अन्य कार्यों हेतु निकाल ली जाएगी। राजकीय स्वामित्व के समान सुविधा-युक्त आवासों के (एकल परिवार के आधार पर) आवंटन से दलितों (और अन्य मजदूरों के भी)पृथग्वासन की समस्या हल हो जाएगी,जो सामाजिक पार्थक्य का एक अहम् कारण है।

खेती और उद्योग के राजकीयकरण ,गांवों और शहरों के समान सुविधायुक्त

आवासों (और संचार-परिवहन-मनोरंजन सुविधा) से कृषि और उद्योग तथा गाँव और शहर के बीच के अंतर मिटने लगेंगे।इस प्रक्रिया में मानसिक श्रम और शारीरिक श्रम के बीच का अंतर भी कम हो जायेगा। ये तीन अन्तरवैयक्तिक असमानताएं समाजवादी समाज में बुर्जुआ विशेषाधिकारों का भौतिक आधार होती हैं। इनके मिटते जाने के साथ बुर्जुआ विशेषाधिकार भी समाप्त होते जायेंगे और परिणामतः बुर्जुआ जाति-व्यवस्था भी मरणो, मुख होती जाएगी ।

समाजवादी व्यवस्था में धर्म

हर नागरिक की निजी आस्था और पूजा-पाठ,अरदास-नमाज आदि के अधिकार का सम्मान किया जायेगा। जो पुराने स्थापित धर्म-स्थल हैं,उन्हें लोगों की भावनाओं का ख्याल रखते हुए बने रहने दिया जायेगा,लेकिन उनका नियंत्रण ट्रष्टों और मठाधीशों से राज्य छीन लेगा।धार्मिक संगठन बनाना या धर्म के आधार पर किसी प्रकार की गोलबंदी करना दंडनीय अपराध होगा।किसी को अपने घर में धार्मिक रीति- रिवाज से शादी करने का हक होगा,पर शादियों के पंजीकरण के बाद ही मान्यता देगा।

समाजवादी व्यवस्था में नारी

स्त्रियों की पराधीनता परिवार के बुर्जुआ ढांचे और अन्तः जातीय विवाहों का आधार है।सार्विक समान निःशुल्क शिक्षा की अनिवार्यता और सबको रोजगार की गारंटी के अतिरिक्त गाँव-शहरों में बड़े पैमाने पर पालना घरों ,किंडर गार्डनों और सामूहिक भोजशालाओं आदि का निर्माण करके घरेलू कामों की घृणित दासता से स्त्रियों को मुक्त कर दिया जायेगा।फलतः सार्वजनिक जीवन में उनकी भागीदारी बढ़ेगी।इससे पिता और पति पर उनकी निर्भरता समाप्त हो जाएगी और वे अपनी जिन्दगी के फैसले बिना किसी दबाव के ले सकेंगी।इससे प्रेम विवाह और अंतरजातीय विवाहों का चलन बढेगा और जाति की दीवारें भरभरा कर गिरने लगेंगी ।

इस तरह समाजवाद उत्पादक शक्तियों के विकास के साथ-साथ उत्पादन संबंधों में भी लगातार बदलाव लाते हुए और उसके साथ-साथ, पूरा जोर देकर अधिरचना के क्षेत्र में भी सतत क्रांति चलाते हुए मूलाधार और अधिरचना से जाति-व्यवस्था का समूल नाश का देगा। समाजवादी संक्रमण की कम्युनिज्म तक की यात्रा तो काफी लम्बी होगी,लेकिन जाति-व्यवस्था का उन्मूलन तो समाजवादी समाज में कुछ दशकों का ही काम होगा।

फौरी रणनीति

आधार पत्र कहता है कि बेशक जाति-व्यवस्था का अंतिम तौर पर उन्मूलन समाजवाद

के ही दौर में संभव होगा पर,उसके पूर्व फौरी तौर पर इस दिशा में कुछ काम किये जायेंगे। समाजवाद के रास्ते जाति-उन्मूलन के लिए हजारों प्रखर,प्रभावी कम्युनिस्ट प्रचारकों; पर्चों-पुस्तिकाओं-सांस्कृतिक कार्यक्रमों,छोटी-छोटी शिक्षा मंडलियों की जरुरत होगी।जात-पात तोड़क भोज-भात का आयोजन,मांगपत्रकों में दलित मजदूरों की मांगों को प्रमुखता देना तथा दलित मजदूरों के आंदोलनों में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेना होगा।सार्विक ,समान ,निःशुल्क शिक्षा ,सबको रोजगार हमारी दूरगामी मांग होगी।हम उन्हें बतायेंगे कि हम पहले से मिले आरक्षण को छीनने की मांग का समर्थन नहीं करते,हम इसे लागू करने में होने वाली धांधली का भी विरोध करते हैं।पर,साथ ही हम यह भी बतायेंगे कि पिछले साठ सालों में इससे दलितों को बहुत लाभ नहीं मिला और आरक्षण दलित जातियों को आपस में बांटने और लड़ाने का काम कर रहा है।

शेष में आधार पत्र कहता है-'जाति का प्रश्न सहस्राब्दियों पुराना प्रश्न है।इसे चुटकियों में हल करने का कोई रामवाण नुस्खा नहीं है। यह एक लम्बी श्रमसाध्य प्रक्रिया की मांग करता है।यह सवाल पूंजीवाद के नाश के साथ जुड़ा हुआ है।आज के समय में जाति उन्मूलन की किसी परियोजना की दिशा में कदम बढ़ाना एक साहसिक काम होगा। लेकिन हर कठिन काम साहसिकता की मांग तो करता ही है। आज जाति उन्मूलन स्वप्न जैसा लग सकता है, लेकिन उस स्वप्न का वैज्ञानिक आधार हो तो उसे यथार्थ में बदला ही जा सकता है। ऐसा सपना तो हर सच्चे क्रांतिकारी को देखना चाहिए।

मरी हुई बंदरिया की भांति यूरोप से खारिज मार्क्सवाद को ढो रहे हैं : भारतीय मार्क्सवादी

पाठक मित्रों, इस पुस्तक की लेखकीय के दौरान मुझे मार्क्स और मार्क्सवादियों के विषय में कुछ दिलचस्प जानकारी मिली जिससे लगा मेरा प्रयास बिल्कुल सही दिशा है।कुछ ही दिन पूर्व मेरी जेएनयू के चर्चित समाजशास्त्री प्रो. विवेक कुमार से फोन पर बात हो रही थी।मैंने अवसर देख बातों का क्रम मार्क्स और मार्क्सवादियों की ओर मोड़ दिया।उन्होंने बिना कोई भूमिका बांधे कह दिया,'मार्क्स कोई मौलिक चिन्तक नहीं था।सभी जानते हैं उसने हीगेल के दर्शन में कुछ संसोधन कर अपना 'वाद' विकसित किया था और आज यूरोप के लिए मार्क्सवाद मर चुका है ।वहां अब उसका कोई जिक्र भी नहीं करना चाहता ।यह तो भारत के सवर्ण मार्क्सवादी हैं जो मरी हुई बंदरिया की भाँति मार्क्सवाद को ढो रहे हैं।'इन पंक्तियों को लिखने के दौरान कुछ घंटे पूर्व ही मार्क्स और भारतीय मार्क्सवादियों के विषय में फेसबुक पर कुछ और रोचक जानकारी मिली।

मैं पिछले एक साल से फेसबुक से जुड़ा हूँ और अब आदत ऐसी बन गयी है कि हर 4-5 घंटे बाद उस पर नजर दौडाए बिना चैन नहीं पड़ता ।अपनी इस आदत के कारण 14 अक्तूबर की रात ग्यारह बजे फेसबुक पर सरसरी तरह से नजर दौड़ा रहा था कि हमारे फेसबुक मित्र राजेन्द्र कुमार और फकीर जय के 4 घंटे पूर्व के वार्तालाप पर दृष्टि थम गयी। वह दोनों मार्क्सवाद पर पर बहुत ही दिलचस्प कमेन्ट किये थे जो हूबहू आपके सामने रखने से खुद को नहीं रोक पा रहा हूँ।

एशियाई समाजों से नावाकिफ मार्क्स

Rajendr kumaar -एशियन मोड ऑफ प्रोडक्शन को कार्ल मार्क्स तक नहीं समझ पाया तो ये इन्डियन कयुनिस्ट क्या चीज हैं।

Rajendr kumar -अरे भाई औकात नहीं है ।बस इतनी औकात है कि मार्क्स को पढ़कर दलितों और साम्प्रदायिक तबकों को गरियाते रहें। अब दलित और अन्य पढ़ रहे हैं तो मुश्किल हो रही है कि ये लोग अपना काम आप करेंगे।

Faqir jay -मार्क्स प्रतिभाशाली था। अगर वह एशियाई समाज को नहीं समझ सका तो इसलिए कि वह यहाँ से दूर था और भारत के बारे में कच्चा आकड़ा चाहिये था जो उसे ब्रिटेन की फैक्ट्री से मिले ।उसका भौतिकवादी दर्शन गहरा था और रुढ़िवादी भी नहीं था,मगर ये तो यहीं रहकर नहीं जानते। इन्हें दलित-पिछड़ों को गाली देने से फुर्सत मिले तब ना कुछ अध्ययन करें! एक फ्रांसिसी चिन्तक ने सही कहा है इन मध्यम लोगों से ज्यादा आसानी से मजदूर (भारत के मामले में मजदूरों की फौज किस समुदाय आती है बताने की जरुरत नहीं है) दास कपिटल को ज्यादा से आसानी से समझ सकते हैं ।ये घमंडी और बदमिजाज हैं। स्नॉब हैं। एलिट हैं ।सदियों से हमें गाली देते रहे हैं ।अब लोकतंत्र के कारण वह हालात नहीं रहे तो मार्क्सवाद की आड़ में गाली देते हैं ।मार्क्स जिन्दा होता तो इनके खिलाफ भी घोषणापत्र जरुर निकालता। rajendr kumaar -लेकिन मैं यह जरुर कहूँगा कि मार्क्स लेबर का नेचर नहीं समझ पाया,खासतौर से कैपिटल नेचर ऑफ लेबर।

Faqir jay -हो सकता है ।मार्क्स की श्रम की अवधारणा अतिरिक्त मूल्य पर टिकी है ।उसने इस सिद्धांत का विकास किया मगर वह इसके जनक के रूप में एक मोची को चिन्हित करता है। उस मोची के प्रति इसके लिए उसने 'पूंजी' की भूमिका में कृतज्ञता ज्ञापन किया हैं ।यह सिद्धांत मुझे सही लगता है ।मगर शेयर और फिनान्स कैपिटल चूँकि 19 वीं सदी में इतनी विकसित नहीं थी इसलिए इनकी भूमिका को 'पूंजी' की किताब से ठीक से नहीं समझा जा सकता ।श्रम के बारे में पिट नामक अर्थशास्त्री के भी विचार देखने चाहिए ।मगर उसकी भौतिकवाद बुद्ध के सौत्रन्तिका धारा के भौतिकवादी परम्परा से मिलती है ।इसलिए मैं उसे अपने पाले का आदमी

मानता हूँ। मगर तथाकथित भारतीय मार्क्सवादी हमारे पाले के नहीं हैं।

मार्क्सवादियों के खिलाफ 106 सवाल

अब प्रो. विवेक कुमार, राजेन्द्र कुमार और फकीर जय की बातों का निष्कर्ष निकाला जाय तो यही तथ्य सामने आता है कि मार्क्सवाद मर चुका है और यह भारतीय मार्क्सवादी हैं जो उसकी लाश को ढो रहे हैं। मार्क्स एशियाई परिवेश में न पले-बढे होने तथा मुख्यतः ब्रिटश दस्तावेजों की सूचनाओं पर निर्भर होने के कारण एशियाई समाजों को समझने में व्यर्थ रहा। किन्तु तमाम कमियों के बावजूद मार्क्स भारत के वंचितों के करीब था, लेकिन अहंकारी भारतीय मार्क्सवादी न कभी इनके निकट रहे और न ही उनसे कभी निकटता हो सकती है।इसे सुखद आश्चर्य ही कहा जायेगा कि मार्क्स, मार्क्सवाद और भारतीय मार्क्सवादियों के प्रति जो राय, प्रो. कुमार, राजेन्द्र कुमार और जय जी की है ,पिछले डेढ़ से लगभग वैसी ही राय उनके प्रति मेरी भी बनी हुई है।हालांकि मैं मार्क्स को लगभग उतना ही पढ़ा हूँ जितना मार्क्सवादी डॉ. आंबेडकर को ।अर्थात बहुत थोडा पढ़ा हूँ,किन्तु जितना भी पढ़ा हूं मुझे संतुष्टि है कि मैंने उसकी व्यर्थता को समझ लिया है।यही कारण जब जाति उन्मूलन संगोष्ठी के आयोजकों का आधार पत्र पढ़ा तो गुस्से और खीझ से भर पड़ा।वह संगोष्ठी और उसमे जारी आधार पत्र बौद्धिक दुःसाहस की पराकाष्ठा थी।इसलिए उसका जवाब देने से खुद को नहीं रोक पाया और 27 मार्च से लेकर 6 जुलाई के बीच 21 लेख लिख कर 106 सवाल उनके मुंह पर दे मारा।मेरे शताधिक सवालों में एक का भी जवाब नहीं मिला।मैंने उन्हें बतलाया भी मैं 50 से अधिक किताबों का लेखक हूँ।किन्तु उन्होंने मुझ जैसे लेखक को या तो गंभीरता से लिया नहीं या वे जवाब देने में खुद को सक्षम नहीं पाए।

मैंने शुरुआती एक सप्ताह रोजाना ही एक लेख लिखा जिसे फेसबुक और इमेल पर डालता रहा। किन्तु फेसबुक मित्रों की विरक्ति का ख्याल कर लेखों का अंतराल बढा दिया। इन 21 लेखों में मैंने शुरुआत में मार्क्स और आंबेडकर में बुनियादी फर्क दिखलाया। इस दिशा में गैर-मार्क्सवादियों से संवाद-1(सर्वस्व-हाराओं के मसीहा : डॉ. आंबेडकर) तथा संवाद-3 (सर्वस्व-हाराओं के देश में सर्व-हारा के मुक्तिदाता का जयगान) महत्त्वपूर्ण लेख लिखा जिसे पढने का विशेष आग्रह करूँगा।

मार्क्स और आंबेडकर में बुनियादी फर्क

आम तौर कार्ल मार्क्स को लोग दुनिया बदलने वाला सर्वश्रेष्ठ विचारक मानने का अभ्स्त रहे हैं। ऐसे लोगों का दृढ़ विश्वास रहा है कि मार्क्स पहला व्यक्ति था, जिसने विषमता की समस्या का हल निकालने का वैज्ञानिक ढंग निकाला, इस रोग का बारीकी

के साथ निदान किया और उसकी औषधि को भी परख कर देखा। किन्तु मार्क्स को सर्वश्रेष्ठ विचारक मानने वालों ने कभी उसकी सीमाबद्धता को परखने की कोशिश नहीं की। मार्क्स ने जिस आर्थिक गैर-बराबरी के खात्मे का वैज्ञानिक सूत्र दिया उसकी उत्पत्ति साइंस और टेक्नालोजी के कारणों से होती रही है। उसने जन्मगत कारणों से उपजी शोषण और विषमता की समस्या को समझा ही नहीं। जबकि सच्चाई यह है कि मानव-सभ्यता के विकास की शुरुआत से ही मुख्यतः जन्मगत कारणों से ही सारी दुनिया में विषमता का साम्राज्य कायम रहा, जो आज भी काफी हद तक अटूट है। इस कारण ही सारी दुनिया में महिला अशक्तिकरण हुआ। इस कारण ही नीग्रो जाति को पशुवत इस्तेमाल होना पड़ा। इस कारण ही भारत के दलित-पिछड़े हजारों साल से शक्ति के स्रोतों (आर्थिक-राजनीतिक- धार्मिक) से पूरी तरह शून्य रहे।

दरअसल तत्कालीन यूरोप में औद्योगिक क्रांति के फलस्वरूप पूंजीवाद के विस्तार ने वहां के बहुसंख्यक लोगों के समक्ष इतना भयावह आर्थिक संकट खड़ा कर दिया कि मार्क्स पूंजीवाद का ध्वंस और समाजवाद की स्थापना को अपने जीवन का एकमात्र लक्ष्य बनाये बिना नहीं रह सके। इस कार्य में वे जूनून की हद तक इस कदर डूबे कि जन्मगत आधार पर शोषण, जिसका चरम प्रतिबिम्बन भारत की जाति-भेद और अमेरिका-दक्षिण अफ्रीका की नस्ल-भेद व्यवस्था में हुआ, शिद्दत के साथ महसूस न कर सके। पूंजीवादी व्यवस्था में जहां मुट्ठी भर धनपति शोषक की भूमिका में उभरता है, वहीं जाति और नस्लभेद व्यवस्था में एक पूरा का पूरा समाज शोषक तो दूसरा शोषित के रूप में नजर आते हैं। भारत में ऐसे शोषकों की संख्या 15 प्रतिशत और शोषितों की 85 प्रतिशत रही। जबकि अमेरिका में लगभग पूरा का पूरा गोरा समाज ही, जिसकी संख्या 70 प्रतिशत रही, अश्वेतों के खिलाफ शोषक की भूमिका में दंडायमान रहा। पूंजीपति तो सिर्फ सभ्यतर तरीके से आर्थिक शोषण करते रहे हैं, जबकि जाति और रंगभेद व्यवस्था के शोषक अकल्पनीय निर्ममता से आर्थिक शोषण करने के साथ ही शोषितों की मानवीय सत्ता को पशुतुल्य मानने की मानसिकता से पुष्ट रहे। खैर जन्मगत आधार पर शोषण से उपजी विषमता के खात्मे का जो सूत्र मार्क्स न दे सका, इतिहास ने वह बोझ डॉ. आंबेडकर के कन्धों पर डाल दिया, जिसका उन्होंने नायकोचित अंदाज में निर्वहन किया।

जन्माधारित शोषण का सबसे बड़ा दृष्टान्त भारत की जाति-भेद व्यवस्था में स्थापित हुआ। भारत में सहस्रों वर्षों से आर्थिक और सामाजिक विषमता के मूल में रही है सिर्फ और सिर्फ वर्ण-व्यवस्था। इसमें अध्ययन-अध्यापन, पौरोहित्य, राज्य संचालन में मंत्रणादान, राज्य-संचालन, सैन्य वृत्ति, व्यवसाय-वाणिज्य इत्यादि के अधिकार सिर्फ ब्राह्मण-क्षत्रिय और वैश्यों से युक्त सवर्णों के हिस्से में रहे। चूंकि इस व्यवस्था में ये सारे अधिकार जाति/वर्ण सूत्र से पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तांरित होते

रहे इसलिए वर्ण-व्यवस्था ने एक आरक्षण-व्यवस्था का रूप ले लिया, जिसे हिंदू आरक्षण-व्यवस्था का नाम दिया जा सकता है। इस हिंदू आरक्षण में दलित-पिछड़ों के साथ खुद सवर्णों की महिलाएं तक शक्ति के सभी स्रोतों से पूरी तरह दूर रखी गयीं।

सर्वहारा बनाम सर्वस्वहारा

हिंदू आरक्षण के वंचितों में अस्पृश्यों की स्थिति मार्क्स के सर्वहाराओं से भी बहुत बदतर थी। मार्क्स के सर्वहारा सिर्फ आर्थिक दृष्टि से विपन्न थे, पर राजनीतिक, आर्थिक और धार्मिक क्रियाकलाप उनके लिए मुक्त थे। विपरीत उनके भारत के दलित सर्वस्वहारा थे जिनके लिए आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक और शैक्षणिक गतिविधियां धर्मादेशों से पूरी तरह निषिद्ध रहीं। यही नहीं लोग उनकी छाया तक से दूर रहते थे। ऐसी स्थिति दुनिया में किसी भी अन्य मानव समुदाय की कभी नहीं रही। यूरोप के कई देशों की मिलित आबादी और संयुक्त राज्य अमेरिका के समपरिमाण संख्यक सम्पूर्ण अधिकारविहीन इन्हीं मानवेतरों की जिंदगी में सुखद बदलाव लाने का असंभव सा संकल्प लिया था डॉ. आंबेडकर ने। किस तरह तमाम प्रतिकूलताओं से जूझते हुए दलित मुक्ति का स्वर्णीय अध्याय रचा, वह एक इतिहास है जिससे हम सब भलीभांति वाकिफ हैं।

डॉ. आंबेडकर ने दुनिया को बदलने के लिए किया क्या? उन्होंने हिंदू आरक्षण के तहत सदियों शक्ति के सभी स्रोतों से बहिष्कृत किये गए मानवेतरों के लिए संविधान में आरक्षण के सहारे शक्ति के कुछ स्रोतों (आर्थिक-राजनीतिक) में संख्यानुपात में हिस्सेदारी सुनिश्चित कराया। परिणाम चमत्कारिक रहा। जिन दलितों के लिए कल्पना करना दुष्कर था, वे झुण्ड के झुण्ड एमएलए, एमपी, आईएएस, पीसीएस, डॉक्टर, इंजिनियर इत्यादि बनकर राष्ट्र की मुख्यधारा से जुड़ने लगे। दलितों की तरह ही दुनिया के दूसरे जन्मजात सर्वस्वहाराओं-अश्वेतों, महिलाओं इत्यादि को जबरन शक्ति के स्रोतों दूर रखा गया। भारत में आंबेडकरी आरक्षण के, आंशिक रूप से ही सही, सफल प्रयोग ने दूसरे देशों के सर्वहाराओं के लिए मुक्ति के द्वार खोल दिए। आंबेडकरी प्रतिनिधित्व (आरक्षण) का प्रयोग अमेरिका, इंग्लैण्ड, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, मलेशिया, आयरलैंड ने अपने-अपने देश के जन्मजात वंचितों को शक्ति के स्रोतों में उनकी वाजिब हिस्सेदारी देने के लिए किया। इस आरक्षण ने तो दक्षिण अफ्रीका में क्रांति ही घटित कर दिया। वहां जिन 9-10 प्रतिशत गोरों का शक्ति के समस्त केन्द्रों पर 80-90 प्रतिशत कब्जा था, वे अब अपने संख्यानुपात पर सिमट रहे हैं, वहीं सदियों के वंचित मंडेला के लोग अब हर क्षेत्र में अपने संख्यानुपात में भागीदारी पाने लगे हैं। इसी आरक्षण के सहारे सारी दुनिया में महिलाओं को राजनीति इत्यादि में प्रतिनिधित्व

सुनिश्चित कराने का अभियान जारी है। यह सही है कि सम्पूर्ण विश्व में ही अम्बेडकरी आरक्षण ने जन्मजात सर्वस्वहाराओं के जीवन में भारी बदलाव लाया है। पर अभी भी इस दिशा में बहुत कुछ करना बाकी है। अभी भी शक्ति के सभी स्रोतों में मुक्कमल रूप से आंबेडकरी प्रतिनिधित्व का सिद्धांत लागू नहीं हुआ है, यहां तक कि अमेरिका और दक्षिण अफ्रीका में भी। इसके लिए लड़ाई जारी है और जब ऐसा हो जायेगा, फिर इस सवाल पर माथापच्ची नहीं करनी पड़ेगी कि दुनिया को सबसे प्रभावशाली तरीके से बदलने वाला कौन?

जाति के अर्थशास्त्र से अनजान : मार्क्स

उपरोक्त दो लेखों में दोनों मनीषियों-डॉ. आंबेडकर और मार्क्स) में आधारभूत अंतर दिखलाने के बाद 19 लेखों में भारत में वर्ग-संघर्ष तथा जाति के उद्भव और विकास पर विस्तार से रोशनी डाली गयी है। मुझे यह कहने में कोई झिझक नहीं कि मार्क्स की जाति के विषय में समझ बहुत सीमित थी ।यह मेरे लिए काफी विस्मयकर बात है कि हर बात को आर्थिक नजरिए देखने वाला दुनिया का अद्वितिय विचारक वर्ण/जाति व्यवस्था को कैसे सिर्फ श्रम के बंटवारे तक सीमित करके देखा!

वर्ण-व्यवस्था के पीछे साम्राज्यवादी परिकल्पना

साम्राज्यवाद के खिलाफ सर्वाधिक गर्जन करने वाला मार्क्स यह नहीं समझ पाया कि वर्ण-व्यवस्था के निर्माण के पीछे एक साम्राज्यवादी परिकल्पना रही है। चूंकि दुनिया में सर्वत्र ही साम्राज्यवादियों का लक्ष्य पराधीन बनाये गए देश के सम्पदा -संसाधनों पर कब्जा जमाना तथा मूलनिवासियों को निःशुल्क दास में परिणत कर उनके श्रम का शोषण करना रहा है, इस लिहाज से विदेशागत विजेता लोगों को चिरस्थाई तौर पर धन-धरती का स्वामी बनाने तथा मूलनिवासियों को निशुल्क दास में परिणत करने वाली वर्ण-व्यवस्था जैसी अजर-अमर शोषणकारी व्यवस्था विश्व में कही और वजूद में आई ही नहीं। यह मात्र सम्पदा-संसाधन ही नहीं विशुद्ध रूप से शक्ति के स्रोतों (आर्थिक-राजनीतिक और धार्मिक) के बंटवारे कि व्यवस्था रही ।इसमें कर्म-शुद्धता की अनिवार्यता और कर्म-संकरता (professional mobility) के निषेध के रास्ते ऐसा बंदोबस्त किया गया कि शक्ति के सारे स्रोत हिन्दू-साम्राज्यवादियों (ब्राह्मण-क्षत्रिय और वैश्यों) के लिए आरक्षित होकर रह गए ।ऐसे में वर्ण-व्यवस्था ने एक आरक्षण-व्यवस्था, जिसे हिन्दू आरक्षण कहा जा सकता है,का रूप ले लिया ।इसमें क्षत्रियों के शस्त्रों के साए में पालित शास्त्रों द्वारा पराधीन मूलनिवासियों को शक्ति के स्रोतों से पूरी तरह बहिष्कृत-वंचित कर,उन्हें चिरस्थाई रूप से निःशुक्ल दास में परिणत करने का सफल उद्योग लिया गया।

Continue Your Reading Journey

This preview has ended. Access the complete library and support our mission.

Join Our Inclusive Reading Community

✓ We champion diverse voices and perspectives

✓ Your support helps amplify underrepresented authors

✓ We provide free access to educational institutions

✓ Building bridges through shared stories

✓ Creating space for all narratives to be heard

Support Our Mission

Your donation enables us to:

• Curate diverse book collections

• Support authors from marginalized communities

• Provide free resources to educators

• Maintain our accessible digital library

Visit: www.diversitymission.in

Sign the diversity pledge • Make a donation • Download full library